५१३ मोहमयी, श्रावण सुदी ११, रवि, १९५०

ॐ

श्री सूर्यपुरस्थित, सत्संगयोग्य श्री लल्लुजीके प्रति विनती कि–

दो पत्र प्राप्त हुए हैं। यहाँ भावसमाधि है।

'योगवासिष्ठ' आदि ग्रंथ पढ़ने-विचारनेमें कोई दूसरी बाधा नहीं है। हमने पहिले लिखा था कि उपदेशग्रंथ समझकर ऐसे ग्रंथ विचारनेसे जीवको गुण प्रगट होता है। प्रायः वैसे ग्रंथ वैराग्य और उपशमके लिये हैं। सिद्धांतज्ञान सत्पुरुषसे जाननेयोग्य समझकर जीवमें सरलता, निरहंता आदि गुणोंका उद्भव होनेके लिये 'योगवासिष्ठ', 'उत्तराध्ययन', 'सूत्रकृतांग' आदिके विचारनेमें बाधा नहीं है इतना स्मरण रखिये।

वेदांत और जिन सिद्धांत इन दोनोंमें अनेक प्रकारसे भेद है। वेदांत एक ब्रह्मस्वरूपसे सर्व स्थिति कहता है। जिनागममें उससे दूसरा प्रकार कहा है। 'समयसार' पढ़ते हुए भी बहुतसे जीवोंका एक ब्रह्मकी मान्यतारूप सिद्धांत हो जाता है। सिद्धांतका विचार, बहुत सत्संगसे तथा वैराग्य और उपशमका बल विशेषरूपसे बढ़नेके बाद कर्तव्य है। यदि ऐसा नहीं किया जाता तो जीव दूसरे मार्गमें आरूढ़ होकर वैराग्य और उपशमसे हीन हो जाता है। 'एक ब्रह्मस्वरूप' विचारनेमें बाधा नहीं है, अथवा 'अनेक आत्मा' विचारनेमें बाधा नहीं है। आपको अथवा किसी मुमुक्षुको मात्र अपना स्वरूप जानना ही मुख्य कर्तव्य है, और उसे जाननेके साधन शम, संतोष, विचार और सत्संग है। उन साधनोंके सिद्ध होनेपर, वैराग्य एवं उपशमके वर्धमान परिणामी होनेपर, 'आत्मा एक है' या 'आत्मा अनेक है'' इत्यादि भेदका विचार करना योग्य है। यही विनती।

आ० स्व० प्रणाम।